सत्यांश

जीना भी साथ, मरना भी साथ

विस्थापित कश्मीरी पंडितों को कश्मीर घाटी में बसाने की चर्चा एक बार फिर सुर्खियों में है। भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व वाली केन्द्र सरकार और जम्मू-कश्मीर में भाजपा के सहयोग, सहभागिता से बनी मुफ्ती सरकार ने कश्मीर से विस्थापित पंडितों की पुनर्वापसी के प्रति अपनी प्रतिबद्धता दर्शाई है। प्रायः सभी दलों ने इसका स्वागत-समर्थन किया है, लेकिन पुनर्वापसी की शर्तों व तौर-तरीकों को लेकर गहरी मतभिन्नता भी उजागर हुई है। कश्मीरी पंडितों के बीच से भी अलग-अलग कई सुर सुनाई पड़ रहे हैं। मुख्यमंत्री मुफ्ती मोहम्मद सईद ने कहा है कि मुश्किल से पन्द्रह प्रतिशत के आसपास की संख्या में ही कश्मीरी पंडित वापस आना चाहेंगे, क्योंकि वे कश्मीर से बाहर अच्छी तरह कमा-खा रहे हैं। इस बात में चाहे जितनी सच्चाई हो, पर पैतृक भूमि में कश्मीरी पंडितों को पुनः स्थापित कराने के मुद्दे पर लगभग एकजुटता है।

भारत की स्वतंत्रता-प्राप्ति के समय कश्मीरी पंडितों की संख्या कश्मीर की कुल आबादी की पन्द्रह प्रतिशत थी, जो 1980-81 ई. आते-आते पाँच प्रतिशत तक रह गई। 1990-91 ई. में जब कट्टरपंथियों-उग्रवादियों द्वारा तरह-तरह के अनाचार-अत्याचार किए गए, तब लाखों की संख्या में ये लोग जम्मू और देश के अन्य भागों में शरणार्थी बन गए। आज की स्थिति है कि लगभग 750 पंडित परिवारों के कुल 3500 से कम लोग ही कश्मीर में रह गए हैं। कश्मीर से बाहर रह रहे पंडित कश्मीरियों के लिए सरकार कुछ राहत व सुविधाएँ देती है; पर वह नाकाफी है और दूसरा, हमेशा संकटग्रस्त रखते हुए राहत भी कब तक दिया जा सकता है। फलतः स्थायी समाधान हेतु कश्मीर में वापस बुलाकर इन्हें बसाने की आवश्यकता है।

कश्मीर के इतिहास, संस्कृति और लोक जीवन के अभिन्न अंग कश्मीरी पंडित रहे हैं। इसलिए यह आवाज सब ओर से उठने लगी है कि पंडितों के बिना कश्मीर अधूरा है। जम्मू-कश्मीर सरकार और राजनीतिक पार्टियों ने भी यही कहा है। इस अधूरेपन को भरने के लिए पंडितों को कश्मीर में ससम्मान बसाना एक सीधा समाधान है, पर कैसे बसाया जाए, यह ज्वलंत समस्या है। इसी कारण यह योजना-कार्य जमीनी धरातल पर अब तक साकार नहीं हो पाया है। कोई विशिष्ट स्थान पर अलग नगर बसाकर इन्हें सुरक्षित रखना चाहता है, तो कोई पैतृक घर-संपत्ति पर कब्जा दिलाकर, उसे पुनर्निमित करके वहीं बसाना चाहता है। पुरानी घर-संपत्ति को ये लोग औने-पौने दाम में बेच चुके हैं या फिर उन पर कब्जा हो चुका है। जो कुछ जीर्ण-शीर्ण अवस्था में बचे हैं, वे खौफ की याद दिलाते हैं। घर-संपत्ति को पुनः हस्तांतरित कराके कब्जा दिलाना अब आसान नहीं है। इससे असुरक्षा-कटुता का वातावरण बसने से पहले ही निर्मित हो जाएगा। पहले की जगह पर हू-ब-हू बसने पर समस्याएँ भी पहले की तरह इनका पीछा नहीं करेंगी क्या? एक बार फिर वहाँ के लोगों के साथ पंडितजन घुल-मिलकर रह पाएँगे? यह कितना ही कठिन लगे, पर व्यावहारिक रूप से कुछ हद तक उचित तो है।

कश्मीरी पंडितों के लिए अलग नगर विकसित करने का काम विचारणीय है, पर आसान नहीं। आखिर आधुनिक वैश्विक सभ्यता में किसी अन्य संप्रदाय को किसी स्थान विशेष पर रहने से कैसे निषिद्ध किया जा सकता है? कश्मीरी पंडितों के लिए निर्मित नगर-कालोनियों में प्रवेश करने, रचने-बसने से मुस्लिम सहित अन्य वर्गों को किन आधारों पर रोका जा सकता है? कश्मीरी पंडितों की सुरक्षा के लिए यदि दूसरे अलग रह भी लें, तब भी एक जगह रहने मात्र से पंडितों की जरूरतें कैसे पूरी हो सकती हैं। नौकरी-व्यवसाय, शिक्षा, चिकित्सा, खेलकूद, बाजार, कला-संस्कृति सहित सारी बुनियादी व मनोरंजक सुविधाएँ चाहिए, जिसकी एक स्थान पर चाहे जितनी व्यवस्था कर दी जाए, वह सर्वांग-संपूर्ण नहीं हो सकती। ऐसे में कुछ सुविधाओं के साथ पिंजड़े में बंद रहकर गुजारा चलाना मुश्किल होगा।

खतरा सिर्फ कश्मीरी पंडितों को ही नहीं, बाकी नागरिकों को भी रहता है। सुरक्षा के नाम पर किसी को नियत स्थान पर कब तक कैद रखा जा सकता है। इसलिए पंडितजन स्वयं घुलना-मिलना चाहेंगे। तभी आत्मीय सुरक्षा का वातावरण बनेगा, सारे मानवीय व नागरिक अधिकार सुलभ होंगे और अपनी पैतृक भूमि में रहने का आनंद मिलेगा। विशिष्ट स्थान पर रहते हुए बाहर निकलने पर चिह्नित करके लक्ष्य करना मुश्किल नहीं होगा। भय का माहौल बनाने और सांप्रदायिक तनाव पैदा करने के लिए पंडितों के साथ विशेष रूप से अत्याचार किए जा सकते हैं, ताकि एक बार फिर इन्हें कश्मीर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सके। इसलिए बसाने के साथ सुरक्षा के पूरे इंतजाम और उसकी सतत निगरानी रखनी होगी। स्थानीय लोगों के साथ घुलना-मिलना जितना अधिक होगा, उतना ही ये लोग अलग-थलग व असुरक्षित महसूस नहीं करेंगे। बाकी कश्मीरी भी यही चाहते हैं कि जीना भी पंडितों के साथ हो और मरना भी।